International Journal of Applied Research 2019; 5(5): 169-172

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(5): 169-172
www.allresearchjournal.com
Received: 26-03-2019
Accepted: 28-04-2019

डॉ. कमलेष कुमार सिंह
एसोषिएट प्रोफेसर, राजनीतिषास्त्र विभाग, के.ए. (पी.जी.) कालेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ. कमलेष कुमार सिंह
एसोषिएट प्रोफेसर, राजनीतिषास्त्र विभाग, के.ए. (पी.जी.) कालेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत

कौटिल्य कालीन स्थानीय प्रशासन

डॉ. कमलेष कुमार सिंह

कौटिल्य ने स्थानीय प्रषासन के सम्बन्ध में राज्य को दो भागो में विभक्त किया था,– 1.दुर्ग व 2. जनपद। इसीलिये दुर्ग व जनपद को राज्य के सप्तांग के रुप में अलग–अलग व्यक्त किया गया है। कौटिल्य दुर्ग को पुर या नगर का पर्यायवाची मानते हैं, जिससे उनका तात्पर्य राजधानी से है। इस दुर्ग (राजधानी) को राज्य से अलग करने के उपान्त जो भाग राज्य का शेष रह जाता हैं उसको जनपद के नाम से जाना जाता है।

दुर्ग 'राजधानी' – दुर्ग (राजधानी) में शासन व्यवस्था को विधिवत संचालित करने के लिये कौटिल्य ने नागरिक नाम के एक प्रमुख राजकर्मचारी की नियुक्ति की है। शासन की सुविधा के अनुसार दुर्ग को छोटे–छोटे भागों में विभक्त किया जाना चाहिए और प्रत्येक भाग में एक मुख्य राजकर्मचारी होना चाहिए, जिसकी देख–रेख में दुर्ग के छोटे–बड़े भागों में शासन होता रहे। कौटिल्य ने इन छोटे–बड़े भागो में स्थानिक व गोप की नियुक्ति की व्यवस्था की है।

स्थानिक– कौटिल्य के अनुसार दुर्ग को चार भगो मे बॉटा जाना चाहिए और प्रत्येक भाग के लिये एक स्थानिक नामक राजकर्मचारी नियुक्त किया जाना चाहिए। इस प्रकार राजधानी में स्थानिक नाम के चार राजकर्मचारी होगें, जिनमें से प्रत्येक के अधीन राजधानी का चौथाई भाग होगा। कौटिल्य ने दुर्ग के लिये जो कर्तव्य नागरिकों का बतलाया हैं, वही कर्तव्य स्थानिक का राजधानी के चौथाई भाग के प्रति होगा।

गोप– प्रत्येक स्थानिक नाम के कर्मचारी के अधीन गोप नाम के राजकर्मचारी होते थे। कौटिल्य के अनुसार राजधानी का वह चौथाई भाग जो कि स्थानिक के अधीन होता है, उसमें भी कुटुम्बों के अनुसार दस, बीस या चालीस कुटुम्बों के सहयोग से अलग–अलग संघटन किया जाना चाहिए। दस कुटुम्बों की देख–रेख के लिये एक 'गोप' नाम के कर्मचारी की नियुक्ति होती थी। इसी प्रकार बीस कुटुम्बों व चालीस कुटम्बों के अलग–अलग गोप नियुक्त किये जाते थे।[1] कौटिल्य के अनुसार इस गोप नाम के कर्मचारीयों का कर्तव्य है कि वे अपने अधीन कुटुम्बों के स्त्री–पुरुषों की संख्या व उनकी जाति, गोत्र, नाम, काम, पषु आदि की गणना ही नहीं, वरन् उन कुटुम्बों के आय–व्यय का व्यौरा भी अंकित करते रहना चाहिए। गोप इन आकड़ों को इकट्ठा कर अपने उपर के कर्मचारी स्थानिक को सौंप देता है। स्थानिक इस सूचना का नागरिक तक पहुॅचाता था।

नागरिक के कर्तव्य– नागरिक का मुख्य कर्तव्य अपने अधीन नगर में षान्ति व सुरक्षा की व्यवस्था स्थापित करना, नगर में षान्ति व सुरक्षा के निमित्त कौटिल्य ने नागरिक को निम्न साधनों को अपनाने की सलाह दी है–

1) रात्रि में यात्रियों के ठहरने के नियम– प्रत्येक नगर में प्रतिदिन बाहर से कुछ न कुछ पुरुष (यात्री) अवष्य आया करते हैं और रात्री में धर्मषालाओं, गृहस्थों के घरों व इसी प्रकार के अन्य स्थानों पर ठहरा करते हैं, परन्तु इनके आचरण के विषय में किसी को कोई जानकारी नहीं होती है। सम्भव है इन लोगों में कुछ ऐसे भी लोग हों, जो चोर, डाकू व व्यभिचारी आदि भी हों, और नगर में आकर गुप्तरीति से दुष्टता भी करते हों। इसके रोक–थाम के लिये कौटिल्य ने कुछ सावधानियों का उल्लेख किया है– जैसे बाहर से आये हुये यात्रियों को ठहरने के लिये राजधानी में धर्मषालायें होती हैं। इन धर्मषालाओं के प्रबन्धकों का कर्तव्य था कि उनके धर्मषाला में ठहरने वाले प्रत्येक यात्री की सूचना गोप या स्थानिक को दे। पाखण्डियों को धर्मषाला में ठहरने का निषेध था। धर्मषाला के प्रबन्धक धर्मषाला में उन्हीं यात्रियों को ठहरा सकते थे,

जिनको वे जानते हों या ये यात्री तपस्वी या वेदपाठी ब्राह्मण हों। षिल्पीगण उन घरों में ठहर सकते थे, जहॉ वे काम करते थे। व्यापारी लोग अभ्यागत व्यापारियों को अपनी दुकानों पर ठहरा सकते थे, परन्तु यदि बाहर से आये हुये व्यापारी देष–काल के विपरीत वस्तु बेचने वाले या चोरी आदि का माल रखने वाले हों, इसकी सूचना तुरन्त गोप व नागरिक तक पहुॅचा देनी चाहिए। मद्यविक्रेता, पक्का मॉस बेचने वाला और वेष्यायें अपने परिचितों को ही अपने पास रात्रि में ठहरा सकती हैं, परन्तु इसकी सूचना इन्हें गोप या स्थानिक को अवष्य दे देनी चाहिए कि उनके सम्पर्क में आने वाले कौन–कौन ऐसे व्यक्ति हैं, जो अधिक व्यय कर रहे हैं या निषिद्व कार्य करते हैं। यदि कोई चिकित्सक किसी घर में गुप्तरीति से किसी व्यक्ति के घाव, भोजन की कमी या मदिरापान के कारण होने वाले रोगों की चिकित्सा करता हो तो उस चिकित्सक व चिकित्सा होने के स्थान का स्वामी दोनों को इस विषय की सूचना गोप व स्थानिक तक पहुचाना अनिवर्य था, अन्यथा दोनो को अपराधी माना जायेगा। गृहस्थों को प्रतिदिन इस विषय की सूचना गोप या स्थानिक को देना अनिवार्य था कि उनके घरों से कौन–कौन व्यक्ति बाहर जा रहा है और कौन–कौन बाहर का व्यक्ति आकर रात्रि में ठहरा हुआ है। यदि ऐसा नहीं किया गया तो उक्त रात्रि मे होने वाले अपराध का दोषी वह गृहपति समझा जायेगा, जिसने सूचना नहीं दी है। यदि रात्रि में घटना नही भी हुई हो और गृहपति ने यात्री के ठहरने की सूचना नहीं दी है, तब भी उस गृहपति पर सूचना न देने के अपराध के लिये तीन पण का दण्ड लगेगा।

2) रात्रि के समय नगर में आवागमन के नियम– चोर, डाकुओं व व्यभिचारियों आदि से नगर की जनता की रक्षा होती रहे, इस विचार से रात्रि के समय नगर में लोगों का इधर–उधर आना–जाना कुछ प्रतिबन्धों के अनुसार होना चाहिए। कौटिल्य के अनुसार दुष्ट लोगों को रात्रि में दुष्टता करने का अवसर न मिल सके, इसके लिए सूर्योदय के छः नालिक पूर्वश्व सूर्यास्त के छः नालिक के पष्चात् के बीच का जो रात्रि का समय हैं, उसमें संकेत करने के लिए तुरी षब्द का प्रयोग करना चाहिए।[2] तुरी षब्द के उपरान्त रात्रि के निषिद्ध समय में प्रारम्भ के तीन याम या अन्त के तीन याम के समय जो व्यक्ति राजकीय भवनों के आस–पास घूमता हुआ पाया जाय, उस पर सवा पण दण्ड होना चाहिए। यदि इन दोनों समयों के मध्य अर्थात् अर्द्धरात्रि के आस–पास राजकीय भवनों के समीप कोई व्यक्ति घूमता हुआ पाया जाय तो उस पर अढ़ाई पण और नगर के बाहर घूमने वाले पर पॉच पण दण्ड लगाया जाता है। यदि कोई पुरुष राजकोष, कार्यालयों या नगर की रक्षा की भीत पर चढ़ता हुआ पकड़ा जाय, तो ऐसे पुरुष को मध्यम साहस दण्ड मिलना चाहिए।

इन प्रतिबन्धों के होते हुए भी आवष्यक कार्य के लिये आवागमन करने वाले व्यक्तियों को स्वतन्त्रा दी गयी है। कौटिल्य के अनुसार यदि निषिद्ध समय में कोई पुरुष सूतिका, वैद्य, प्रेत, दीपक हाथ में लेकर चलते हुए, नागरिक के पास जाने वाला, बाजा बजाने, नाटक देखने, या अग्नि बुझाने के लिए आते–जाते पाये जॉय, या जो पुरुष आज्ञा लेकर आ–जा रहा हो, उसको स्वतन्त्रता पूर्वक आने–जाने देना चाहिए। कुछ ऐसे अवसर भी बतलाये गये हैं, जब रातभर लोग बे–रोक–टोक आ–जा सकते थे।

3) रक्षको के लिए नियम – रात्रि के समय के आवागमन को नियन्त्रित करने के लिए नगर में रक्षक होते थे, उनको इन नियमों का कठोरता पूर्वक पालन करना पड़ता था, जो रक्षक नहीं रोकने वाले लोगों को रात में रोकते थे और रोकने योग्य लोगों को रात में नहीं रोकते थे, तो इन रक्षकों पर निषिद्ध समय के नियत दण्ड से दोगुना दण्ड लगाया जाता था। यदि रक्षक किसी दासी के साथ व्यभिचार के अपराध में पकड़ा जाय, तो उस पर प्रथम साहस का दण्ड बनता है।[3] यदि रक्षक साधारण स्त्री के साथ व्यभिचार करता है, तो मध्यम साहस का दण्ड और यदि किसी बन्दी स्त्री के साथ व्यभिचार करता है, तो उत्तम साहस दण्ड लगना चाहिए।[4]

4) दुष्टचरित्र व्यक्तियों पर निगरानी– पथिक वेष में मार्ग में घूमने वाले तथा ग्वाले आदि के वेष में मार्ग का त्याग कर, वन में घूमने वाले गुप्तचर नगर के बाहर या नगर के देवालय, र्धमषाला, वन या ष्मषान में किसी व्रणयुक्त, विषषस्त्र आदि अनुचित साधनों से युक्त भारी, भारधारी, घबराए हुए, अधिक सोने वाले, मार्ग की थकावट से युक्त व अद्भुत ढंग के पुरुष को देखकर उसकी सूचना नागरिक को देनी चाहिए। इसी प्रकार नगर में षून्य स्थान, षिल्पषाला, मद्य की दुकान, पके मांस की दुकान, द्यूतगृह व पाखण्डी साधुओं के स्थानों की भी ये लोग खोज करते रहें और उन पर नजर रखें।

5) खोई हुई वस्तु के पाने की व्यवस्था– यदि किसी व्यक्ति की कोई वस्तु कहीं खो जाय, तो वह वस्तु नागरिक के पास लायी जानी चाहिए और नागरिक को उस वस्तु की तब तक रक्षा करनी चाहिए, जब तक कि उस खोयी हुई वस्तु का स्वामी नागरिक के पास लेने के लिए न आये। अर्थात् यदि कोई वस्तु खोई हुई, भूली हुई या गिरी हुई पड़ी मिल जाय, तो उसके स्वामी के आने तक उसकी रक्षा की जानी चाहिए।[5]

6) अग्नि से रक्षा की सावधानी– कौटिल्य ने अग्नि के प्रकोप से बचने के लिए कुछ सावधानियों का उल्लेख किया है जैसे– ग्रीष्म ऋतु में दिन के आठ भागों के मध्य के चार भागों में अग्नि जलाने का निषेध किया गया है। यदि कोई व्यक्ति इस नियम का उल्लंघन करता हुआ पाया जाय, तो उस पर पण का आठवॉं भाग दण्ड होना चाहिए। इस निषिद्ध समय में यदि किसी को अग्नि जलाने की आवष्यकता पड़ जाय, तो उसको घर के बाहर अग्नि जलाकर अपना काम कर लेना चाहिए, जो गृहणी अपने घर में ग्रीष्म ऋतु में घड़ा, नांद, सीढ़ी, कुल्हाड़ी, सूप, अंकुषकच, और चमड़े की मषक का प्रबन्ध न रखे, उस पर चौथाई पण दण्ड होना चाहिए। इस अवधि में घास–फूस और चटाई की बनी हुई झोपड़ियॉं, हटवा देना चाहिए। अग्नि के द्वारा जीविका कमाने वाले लोगों को नगर के बाहर एक ही स्थान पर काम करने की व्यवस्था की जानी चाहिए। गृहस्वामी रात्रि में अपने घर के द्वार पर ही षयन करें। नगर की गलियों व बाजारों में सहस्त्रों की संख्या में जल से भरे घड़ों का प्रबन्ध रहना चाहिए। इसी प्रकार नगर के चौराहों मुख्य द्वारों और राज्य के कार्यालय पर भी जल से भरे घड़ों का प्रबन्ध होना चाहिए।

कौटिल्य ने ऐसे लोगों को भी दोषी बतलाया है जो नगर के किसी स्थान में आग लग जाने पर उदासीनता प्रकट करते है अथवा अग्निदाह में सहयोग करते हैं। कौटिल्य के अनुसार, यदि घर में आग लग जाय और गृहस्वामी जान–बूझ कर उसे बुझाने को प्रयत्न नहीं करता, तो ऐसे गृहस्वामी पर बारह पण का दण्ड बनता है। घर में आग लग जाने पर उस घर में रहने वाला किरायेदार यदि आग बुझाने में सहयोग नहीं करता, तो उस पर छः पण का दण्ड बनता हैं जिस व्यक्ति की असावधानी से आग लगे, उस पर चौवन पण का दण्ड बनता है। यदि कोई व्यक्ति की जानबूझ कर आग लगाता हुआ पाया जाय, तो उसको उसी अग्नि में डाल देना चाहिए।

नगर में स्वच्छता की व्यवस्था– कौटिल्य नगर को स्वच्छ व स्वस्थ बनाये रखने की विषेष व्यवस्था करता है। कौटिल्य के अनुसार, जो व्यक्ति गालियों व सड़को में कूडा डालता हुआ पाया जाय, उस पर पण का आठवॉं भाग दण्ड होना चाहिए।[6] जो व्यक्ति पानी, कीचड़, से गलियों को गन्दा करता है, उस पर पण

का चौथाई भाग दण्ड होता है। राजमार्ग को गन्दा करने वाले व्यक्ति पर आधे पण का दण्ड होता है। राजमार्ग, धर्मषाला, तीर्थ आदि पवित्र स्थान, जलस्थान, देवालय, और राजकीय कार्यालयों के पास जो व्यक्ति मलोत्सर्ग कर दे, उस पर क्रमषः एक–एक पण का दण्ड होना चाहिए। औषधि, रोग, भय आदि के कारण इन स्थानों पर यदि किसी व्यक्ति के मल–मूत्र निकल जाय, तो ऐसे व्यक्ति को दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए।

नगर में छोटे जानवरों को मरा छोड़ने पर व्यक्ति पर तीन पण का दण्ड तथा बड़े जानवरों को मरा छोड़ने पर छः पण का दण्ड होता है। यदि कोई व्यक्ति अपने मृतक सम्बन्धी को नगर में सड़ने के लिए छोड़ देता है, तो उस पर पचास पण का दण्ड होता है। मृतक को निर्धारित मार्ग से ष्मषान न ले जाने व नियत द्वार से न ले जाने वाले वयक्ति पर पूर्व साहस का दण्ड बनता है। जो द्वार रक्षक इस प्रकार ले जाते हुए, षवों को रोकता नहीं है, उस पर दो सौ पण का दण्ड होता है।

जनपद– कौटिल्य ने राज्य की सात प्रकृतियों मे एक प्रकृति 'जनपद' को माना है, जो स्थानिय प्रषासन का दूसरा अंग है। कौटिल्य के अनुसार उत्तम जनपद के मध्य और अंत में दुर्ग होने चाहिए, जो आपत्ति काल में अपने जनपद के निवासियों और बाहर से आने वाले व्यक्तियों के भोजन की दृष्टि से पर्याप्त सम्पन्न हो। जनपद में ऐसी नदियाँ और पर्वत होने चाहिए जिनसे नगर वासियों की आक्रमणकारियों से रंक्षा हो सके। जहाँ अल्प परिश्रम से ही अन्न का भण्डार लग जाता है। जनपद के निवासी षत्रुओं से द्वेष करने वाले होने चाहिए। जनपद में शक्ति सम्पन्न सामनत होने चाहिए। कीचड़, पत्थर, ऊषर, विषम भूमि, कष्टक श्रेणी, सर्प आदि जन्तु से रहित वन, नदी, और सरोवर से सम्पन्न, कृषि के योग्य भूमि, खान, उत्तम कष्ठ वाले वृक्ष, व हस्तिवन, जलवायु, गौ व मनुष्यों के लिए उपयोगी, सुरक्षित गोचर भूमि, पषुओं से सम्पन्न, मूल्यवान धातुओं से सम्पन्न, परिश्रमी किसानों से युक्त, दण्डकर को सहन कर लेने वाला, षक्तिसम्पन्न बुद्धिमान राजा से परिपालित, उत्तम वर्ण के लोगों से आवासित व पवित्र आचरण वाले निवासियों से युक्त जनपद को उत्तम माना गया है। जिसे कौटिल्य ने जनपद सम्पद् के नाम से सम्बोधित किया है। कौटिल्य के अनुसार, पुराने या नये जनपद को बसाने के लिए राजा को दूसरे जनपदों के लोगों को बुलाकर या अपने ही जनपद के प्रान्तों को उलट–पलट कर बसा लेना चाहिए। कौटिल्य ने जनपद की सबसे छोटी इकाई 'ग्राम' को माना है। ग्राम के उपरान्त कौटिल्य ने षासन की सुविधा के लिए दस ग्रामों के एक छोटे से क्षेत्र को बसाया और इसे संगठित करने के लिए राजांष के संचय हेतु संग्रहण नामक एक स्थान की स्थापना की। दस–दस ग्रामों के इस प्रकार से संघठित किये गये क्षेत्रों के ऊपर दो–दो सौ ग्रामों को एक सूत्र में गूंथकर एक क्षेत्र का निमार्ण होता हैं और इस क्षेत्र के मध्य में खरवटक नाम की एक बस्ती बसायी जाती हैं, जहाँ से इस क्षेत्र पर षासन किया जाता हैं और ग्रामों से संग्रहित राजांष को इकट्ठा किया जाता है। तदोपरान्त चार सौं ग्रामों का संगठन किया जाता है, जिसके मध्य द्रोणमुख नाम की बस्ती की स्थापना की जाती है। इसी प्रकार आठ सौ ग्रामों के बीच स्थानिक नाम की बस्ती बसायी जाती है, जहाँ से इन ग्रामों पर षासन किया जाता है। कौटिल्य ने जनपद के चार भाग करके एक–एक भाग में स्थानिक नाम के अध्यक्ष को नियुक्त करने का जो आदेष किया हैं, उस स्थानिक की राजधनी इसी बस्ती में होती थी। स्थानिक जनपद के चौथाई भाग पर षासन करता था और राजांष को अपने आधीन ग्राम से संग्रहीत करवाकर समाहर्ता के पास भेजा करता था।

जनपद के सीमान्त पर दुर्ग होगा, जो अन्तपाल नाम के अधिकारी के नियत्रंण में होगा, जिसका मुख्य कर्त्तव्य हैं जनपद के षत्रुओं से जनपद की रक्षा करना। जनपद के प्रवेष के द्वार अन्तपालों के दुर्गो के पास ही होने चाहिए। अन्तपालों के दुर्गों के मध्य जनपद की सीमाओं पर व्याघ्र, षबर, चाण्डाल और वनचर लोगों को बसाकर उन्हें जनपद की सीमाओं की रक्षा का भार सौंपना चाहिए।

ग्राम– कौटिल्य ने ग्राम को जनपद की सबसे छोटी इकाई माना है। ग्रामों को बसाने में उनकी रक्षा और कृषिकार्य की सुविधा की ओर विषेष ध्यान देना चाहिए। जनपद में एक या दो कोस की दूरी पर ग्राम की स्थापना की जानी चाहिए, जिससे ग्राम पारस्परिक रक्षा करनें में समर्थ रहे। कौटिल्य के अनुसार 'ग्राम' कृषिप्रधान बस्ती होती है, इसलिए ग्राम की बस्ती में कृषिकार्य करने वाले (शूद्रवर्ण व किसान) तथा इस कार्य से सम्बन्धित अन्य कार्य को करने वालों को तथा उनको सहायता देने वालो की संख्या अन्य लोगों से अधिक होनी चाहिए। कौटिल्य के आदर्श राज्य में कम से कम एक सौ और अधिक से अधिक पाँच सौ परिवार होने चाहिए। प्रत्येक ग्राम की सीमाएँ नदी, पर्वत वन, बेर के वृक्ष, खाई, सेतु, वट या गूलर आदि वृक्षों के द्वारा निर्धारित कर देना चाहिए।

ग्राम में शासन व्यवस्था के विधिवत संचालन हेतु कौटिल्य ने ग्रामिक नाम के एक अधिकारी की नियुक्ति की है। इस ग्रातिक की नियुक्ति राजा के आदेष पर होती है। ग्राम में ग्रामिक का पद बड़ा महत्वपूर्ण माना गया हैं। कौटिल्य के अनुसार यदि ग्रामिक ग्राम कार्य के लिये ग्राम से बाहर जाये, तो ग्राम के कुछ व्यक्तियो को उसके साथ जाना चाहिए। ग्रामिक ग्रामवृद्वों की सहायता से ग्राम में शासन करता है। यदि ग्राम के निवासियों में किसी प्रकार का विवाद खड़ा हो जाये, तो उसका निर्णय ग्राम के वृद्वों को कर देना चाहि।[7] नाबालिक बच्चो की सम्पत्ति की सुरक्षा ग्राम के वृद्वों के द्वारा की जानी चाहिए। ग्रामवृद्ध उस सम्पत्ति को बढ़ाते रहें और जब वह बालक प्राप्त व्यवहार हो जाये, तो ग्रामवृद्धों को उसकी समस्त सम्पत्ति को उसे सौप देना चाहिए। इसी प्रकार देवसम्पत्ति भी ग्रामवृद्धों के अधिकार में होनी चाहिए। अतः स्पष्ट है कि ग्राम के सुशासन का प्रबन्ध ग्रामिक व ग्रामवृद्धों के द्वारा संचालित होता था।

पंचग्रामी– अर्थषास्त्र में पंचग्रामी नाम के राजकर्मचारियों का उल्लेख है। कौटिल्य ने पाँच ग्रामों के सामूहिक जीवन को संगठित करने के लिये पाँच–पाँच ग्रामों को एकसूत्र में गूँथकर जनपद में पाँच–पाँच ग्रामों के शासन क्षेत्रों के निर्माण की व्यवस्था की थी। कौटिल्य के अनुसार यदि दो या दो से अधिक ग्रामों में पारस्परिक सीमा सम्बन्धी विवाद हो जाये, तो उसका निर्णय पंचग्रामी या दषग्रामी को कर देना चाहिये। समाहर्ता द्वारा नियुक्त किया गया पंचग्रामी या दषग्रामी गोप नाम के पदाधिकारी अपने–अपने अधीन ग्रामों की देख–रेख करते रहें। अतः स्पष्ट होता हैं कि पंचग्रामी व दषग्रामी गोप नाम के अधिकारी ही होते थे, जिनकी नियुक्ति समाहर्ता के परामर्ष से राजा के द्वारा की जाती थी।

खार्वटिक– कौटिल्य ने दो–दो सौ ग्रामों को एकसूत्र में गूँथकर एक क्षेत्र का निर्माण किया और इस क्षेत्र के मध्य में खार्वटिक नाम की एक बस्ती स्थापित की, जहाँ से इन दो–सौ ग्रामों पर षासन किया जाता है और इन ग्रामों से संचित हुआ राजांष यहीं संग्रहीत होता था।

द्रोणमुख– चार सौ ग्रामो के मध्य में कौटिल्य ने द्रोणमुख नाम की बस्ती की स्थापना की है।[8]

स्थानिय– कौटिल्य ने जनपद में आठ सौ ग्रामों के षासनकेन्द्र को 'स्थानिय' नाम से सम्बोधित किया है। इस बस्ती का सबसे बड़ा अधिकारी स्थानिक कहलाता है। स्थानिय नाम की बस्ती जनपद के चतुर्थांष का षासनकेन्द्र होती है। यही स्थानिक

जनपद के चौथाई भाग पर षासन करता था[9] और राजांष को अपने अधीन ग्राम से संग्रहीत कर समहर्त्ता को सौप देता था। कौटिल्य के अनुसार जनपद के इन कर्मचारियों को उनकी सेवाओ के बदले वेतन के स्थान पर कृषिभूमि प्रदान की जाती थी, परन्तु कर्मचारी इस भूमि को न तो बेच सकता था, और न ही गिरवी रख सकता था।

सन्दर्भ

1. दषकुलो गोपो विंषतिकुलो चत्वारिंषत्कुलो वा।। वार्ता 2, अ. 36, अधि., 2, अर्थषास्त्र।।
2. विषण्नालिकमुभयतोपरांत यामतूर्यम्।। वार्ता 42, अ. 36, अधि. 2, अर्थषास्त्र।।
3. स्त्रियं दासीमधिमेहयतांपूर्वः साहसदण्डः।। वार्ता 50, अ. 36, अधि. 2, अर्थषास्त्र।।
4. कृतावरोधानुत्तम्।। वार्ता 52, अ. 36, अधि. 2, अर्थषास्त्र।।
5. नष्टप्रमितापसृतानां च रक्षणम्।। वार्ता 56, अ. 36, अधि. 2, अर्थषास्त्र।।
6. पांसुन्याये रथ्यायामष्टभागो दण्डः ।। वार्ता 30, अ. 36, अधि. 2, अर्थषास्त्र।।
7. क्षेत्रविवादं सामन्तग्रामवृद्धाः कुयुः ।। वार्ता 16, अ. 09, अधि. 3, अर्थषास्त्र।।
8. चतुःषत्ग्राम्याः द्रोणमुखं स्थापयेत् ।। वार्ता 04, अ. 01, अधि. 2, अर्थषास्त्र।।
9. एवं च जनपदचतुर्भागं स्थानिकः चिन्तयेत् ।। वार्ता 07, अ. 35, अधि. 2, अर्थषास्त्र।।